



सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया में प्रेम एवं अहिंसा का स्थान: गांधीवादी परिप्रेक्ष्य में

प्रीति मिश्रा, पीएच-डी, दर्शनशास्त्र विभाग
राजेन्द्र कॉलेज, छपरा, बिहार, भारत

ORIGINAL ARTICLE



Author

प्रीति मिश्रा, पीएच-डी

E-mail : preeti25bhu@gmail.com

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 16/07/2026
Revised on : 17/09/2026
Accepted on : 27/09/2026
Overall Similarity : 06% on 19/09/2026



Plagiarism Checker X - Report

Originality Assessment

0%

Overall Similarity

Date: Sep 19, 2026 (01:38 PM)
Matches: 0 / 2380 words
Sources: 0

Remarks: No similarity found,
your document looks healthy.

Verify Report:
Scan this QR Code



शोध सार

सामाजिक परिवर्तन किसी समाज की संरचना, संस्थाओं, संबंधों, मूल्यों और जीवन-पद्धतियों में होने वाला क्रमिक अथवा व्यापक परिवर्तन है। सामान्यतः सामाजिक परिवर्तन को राजनीतिक संघर्ष, आर्थिक विकास, तकनीकी प्रगति या विधिक सुधारों से जोड़ा जाता है; किंतु महात्मा गांधी के चिंतन में सामाजिक परिवर्तन का वास्तविक आधार व्यक्ति का नैतिक रूपांतरण, अहिंसक संघर्ष, सत्य के प्रति निष्ठा और प्रेमपूर्ण सामाजिक संबंध है। गांधी के लिए अहिंसा केवल हिंसा का निषेध या निष्क्रिय सहनशीलता नहीं थी, बल्कि सत्य, करुणा, आत्मबल और प्रेम पर आधारित सक्रिय नैतिक शक्ति थी। सत्याग्रह इसी सक्रिय अहिंसा का सामाजिक-राजनीतिक रूप है, जिसका उद्देश्य विरोधी का विनाश नहीं, बल्कि उसके विवेक और अंतःकरण का जागरण है। प्रस्तुत शोध-पत्र में सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया में अहिंसा और प्रेम की भूमिका का गांधीवादी दृष्टिकोण से दार्शनिक विश्लेषण किया गया है। अध्ययन का मुख्य प्रतिपादन यह है कि गांधीवादी अहिंसा सामाजिक परिवर्तन के साधन और लक्ष्य दोनों को नैतिक बनाती है। प्रेम अहिंसा को नकारात्मक निषेध से सकारात्मक मानवीय संबंध में बदलता है तथा सत्याग्रह को संघर्ष, संवाद, आत्मपीड़ा और रचनात्मक कार्यक्रम से जोड़ता है। गांधी के अनुसार स्थायी सामाजिक परिवर्तन केवल सत्ता-परिवर्तन से नहीं, बल्कि व्यक्ति, समुदाय और संस्थाओं के नैतिक पुनर्गठन से संभव है। वर्तमान समय में साम्प्रदायिक तनाव, सामाजिक असमानता, डिजिटल घृणा, पर्यावरणीय संकट और राजनीतिक ध्रुवीकरण के संदर्भ में गांधीवादी अहिंसा और प्रेम का पुनर्पाठ अत्यंत आवश्यक है।

मुख्य शब्द

सामाजिक परिवर्तन, अहिंसा, प्रेम, सत्याग्रह, गांधीवादी दर्शन, सामाजिक न्याय.

प्रस्तावना

यदि विकास जीवन की एक वांछित सच्चाई है तो उसकी प्राप्ति का मार्ग परिवर्तन है। इस शाश्वत सत्य का युगपद संबंध जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में द्रष्टव्य है। सभ्यता, सांस्कृतिक मूल्यों का क्रमिक विकास तथा वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकीय प्रगति परिवर्तन के ही द्योतक हैं। परंपरा से आधुनिकता परिवर्तन के ही आधार पर ही स्थापित हो पाती है। संस्थाओं एवं देश-काल सापेक्ष मूल्यों, आदर्शों एवं सिद्धान्तों की स्थापना परिवर्तन के कारण ही संभव हो पाती है। अस्तु जीवन का सर्वांगीण विकास परिवर्तन का ही प्रतिफल है। यूँ तो परिवर्तन आर्थिक, सांस्कृतिक, भौतिक, वैज्ञानिक, प्रौद्योगिकी एवं सामाजिक सभी क्षेत्रों में होता है किंतु इनमें सर्वाधिक प्रभावी वह सामाजिक परिवर्तन होता है जिसके कारण सामाजिक जीवन में परिवर्तन होता है। इसके कारण समाज के स्वरूप, सामाजिक संस्थाओं के स्वरूप एवं सामाजिक मूल्यों एवं आदर्शों में परिवर्तन होता है। यह परिवर्तन कभी-कभी प्राकृतिक रूप से बाह्य तो कभी-कभी स्वतः परिस्थितिजन्य कारणों से आन्तरिक होता है। इन परिवर्तनों को समाज के ढाँचे में परिवर्तन, स्थापित मूल्यों में परिवर्तन, सामाजिक रीति-रिवाज एवं परंपराओं में परिवर्तन, सामाजिक गतिविधियों में परिवर्तन, सामाजिक संबंधों में परिवर्तन तथा सामाजिक अन्तःक्रियाओं में परिवर्तन आदि के रूप में देखा जा सकता है किंतु विज्ञान के आविष्कार के साथ-साथ प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में जो नवीन परिवर्तन हुए हैं। उनके तात्कालिक एवं दूरगामी परिणामों ने भारत सहित विश्व के सभी देशों को प्रभावित करने के साथ-साथ मानवता के कटघरे में भी खड़ा किया है, क्योंकि इसने न केवल भारत अपितु भारतेतर अन्य देशों के सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक ढाँचे में भी आमूल चूल परिवर्तन किया है। जहाँ तक भारत का प्रश्न है यहाँ सामाजिक परिवर्तन लाने वाले कारकों में भारतीय स्वतंत्रता, औद्योगिक क्रांति, विज्ञान और प्रौद्योगिकी की उन्नति, कृषि के साथ उद्योगों का जीवन में महत्व, धन के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण, परंपरागत सामाजिक जीवन के प्रति उदासीनता, पाश्चात्य सभ्यता एवं संस्कृति का प्रभाव, पाश्चात्य शिक्षा एवं सहशिक्षा का महत्व, आवागमन तथा संचार माध्यमों का विकास तथा औद्योगीकरण एवं नगरीकरण प्रमुख हैं जिनके कारण सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक तथा नैतिक जीवन पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा है, जो सकारात्मक कम, नकारात्मक ज्यादा है। इन नकारात्मक परिणामों से बचने के लिए गाँधी ने जिस समाज के अखण्ड परिवर्तन के माध्यम से सर्वोदय की परिकल्पना की है उसके लिए उन्होंने जिन तीन परिवर्तनों पर बल दिया है वे हैं – हृदय परिवर्तन, विचार परिवर्तन तथा स्थिति परिवर्तन और स्पष्ट किया है कि चूँकि “आधुनिकीकरण की प्रक्रिया ‘समग्र’ होती है अतः परिवर्तन की प्रक्रिया का भी समग्रता से संयुक्त होना स्वाभाविक है।”

मनुष्य के व्यक्तित्व परिवर्तन को यदि ठीक से समझा जाय तो जब तक उसका हृदय परिवर्तन न होगा तब तक व्यक्तित्व परिवर्तन नहीं हो सकता है। हृदय परिवर्तन का संबंध एक प्रभावकारी सांवेगिकता से है जिससे समग्र व्यक्तित्व में एक व्यापक परिवर्तन होता है, जैसे प्रियदर्शी अशोक का बुद्ध की शरण में आना, डाकू रत्नाकर का आदिकवि वाल्मीकि बनना तथा कामुक तुलसी का संत कविवर बनना आदि हृदय-परिवर्तन के साक्ष्य हैं। हृदय-परिवर्तन से ही धार्मिक आस्था और ईश्वरीय विश्वास अडिग होता है। गाँधी का हृदय-परिवर्तन के संबंध में कहना है कि जहाँ मस्तिष्क शोधन में व्यक्ति के सामने कोई स्वतंत्रता नहीं रहती, वहाँ हृदय-परिवर्तन में व्यक्ति बदलने के लिए स्वतंत्र रहता है। गाँधी के हृदय-परिवर्तन के सिद्धान्त में विवेक का शिथिलीकरण नहीं बल्कि उसे और सुदृढ़ किया गया है। गाँधी हृदय-परिवर्तन की द्वैत प्रणाली में विश्वास करते हैं। इस प्रणाली में प्रवर्तक एवं परिवर्तित दोनों का हृदय-परिवर्तन होता है। यह प्रणाली वैयक्तिक जीवन के साथ ही साथ सामूहिक जीवन पर भी लागू होती है। गाँधी इसे सत्याग्रह की प्रणाली कहते हैं। गाँधी कहते हैं कि “हृदय मानव-व्यक्तित्व का राजा है। वही मनुष्य को दानव या देवता बनाता है। अतः सच्ची क्रांति वही है जो सीधे हृदय को प्रभावित करती है। क्रांति का उद्देश्य है परिवर्तन और परिवर्तन का आदर्श है हृदय-परिवर्तन। जब तक भीतर नहीं बदलेगा तब तक बाहर का बदलाव कारगर नहीं होगा। बुद्धि की तुलना में हृदय का तर्क प्रखर है।” अतः हृदयस्थ मानवीय मूल्यों की उपेक्षा करके समाज में परिवर्तन नहीं लाया जा सकता।

हृदय-परिवर्तन के मूल में विचार परिवर्तन ही है। विचार बदलने से ही हृदय बदलता है। यही कारण है कि जितनी भी सांस्कृतिक क्रांतियाँ हुई हैं उनके मूल में वैचारिक क्रांति ही रही है। गाँधी विचार परिवर्तन तथा हृदय-परिवर्तन को एक दूसरे का पूरक मानते हैं। विचार परिवर्तन की सर्वाधिक प्रभावकारी प्रक्रिया शिक्षण है अतः गाँधी ने सामाजिक परिवर्तन के लिए शिक्षा पर विशेष बल दिया है। विचार परिवर्तन के लिए गाँधी ने प्रार्थना सभा में भाषण, पत्रिका का प्रकाशन एवं ग्राम रचना के कार्यक्रम को प्रमुख माना है। अनुभव के आधार पर कार्य करना और युक्ति के आधार पर लोगों को समझाना विचार-परिवर्तन का मुख्य अस्त्र है। गाँधी ने कहा है कि “जब तक किसी को उनकी बात हृदय एवं मस्तिष्क को तुष्ट नहीं करे तब तक वह उनके विचारों को नहीं माने, किसी भी क्रांति का स्थायी आधार विचार-परिवर्तन ही है।” गाँधी का मानना है कि हृदय-परिवर्तन या विचार-परिवर्तन से ही समग्र सामाजिक परिवर्तन नहीं हो सकता। चूँकि व्यक्ति समाज में रहता है, अतः किसी भी प्रकार का परिवर्तन सामाजिक तथ्यों को भुलाकर संभव नहीं है। “सच तो यह है कि हमारे विचार को सामाजिक परिप्रेक्ष्य से कभी भी

अलग नहीं किया जा सकता है।" "अतः हृदय-परिवर्तन और विचार परिवर्तन के साथ-साथ परिस्थिति परिवर्तन भी क्रांति के लिए अपरिहार्य है। इस तरह क्रांति का त्रिकोण बन जाता है।" स्थिति परिवर्तन कानून से नहीं विचार से होता है। गाँधी ने इस स्थिति परिवर्तन का स्वरूप स्वराज्य और पंचायत राज के रूप में देखा।

गाँधी की दृष्टि में सामाजिक परिवर्तन के साध्य को पाने के लिए साधन की पवित्रता का होना अनिवार्य है इसीलिए उन्होंने सामाजिक परिवर्तन हेतु अहिंसात्मक साधनों को प्राथमिकता दी है। गाँधी सामाजिक परिवर्तन के साधन के रूप में अहिंसा और प्रेम के पक्षधर हैं। उनका मानना है कि समाज का परिवर्तन धीरे-धीरे होता है। विश्व में अहिंसा और प्रेम की मूल प्रवृत्ति व्याप्त है। समाज इसी मूल प्रवृत्ति के कारण आगे बढ़ता है। "मानव-स्वभाव के विकास में 'अहिंसा का विकास क्रम' देखा जाता है। 'सर्वोत्तम सुरक्षित रहता है' डार्विन का यह प्राकृतिक सिद्धान्त आगे चलकर 'जो अक्षम है उसे भी सक्षम बनाओ' – हक्सले के अन्तःमिलन सिद्धान्त में बदल जाता है और अन्त में 'जीवन-संग्राम' के स्थान पर जीवन संग्रह जरूरी है' – यह अलेक्जेंडर के इन्सानी सिद्धान्त का रूप ले लेता है। 'दूसरों को खाकर जीने' के जंगली विचार से ऊपर उठकर 'जीयो और जीने दो' के विचार से गुजरते हुए 'दूसरों के लिए जीने' के विचार तक की यात्रा करते रहना ही अहिंसा की संपूर्ण साधना है।" अतः जीवन का संपूर्ण क्षेत्र ही अहिंसा की रंगशाला है। अहिंसा मानव-सभ्यता की सर्वोत्तम उपलब्धि है। जीवन के आरंभ में ही माँ की ममता और पिता के प्यार में अहिंसा मूर्त हो उठती है। प्रेम ही अहिंसा का आदि, मध्य और अन्त है, अतः यदि अहिंसा का अर्थ प्रेम है तो इसमें शोषण और उत्पीड़न के लिए कोई स्थान नहीं है, क्योंकि "प्रेम और परिग्रह, प्रेम और उत्पीड़न, प्रेम और विषमता, प्रेम और शोषण साथ-साथ नहीं चल सकते।" यदि हत्या हिंसा है तो शोषण भी हिंसा है। शोषण अन्यायपूर्ण आर्थिक लूट है जिससे समाज में अस्वस्थ प्रतिस्पर्धा, पारस्परिक संघर्ष और अनर्थकारी विद्वेष को बढ़ावा मिलता है। जाति, सत्ता और सम्पत्ति पर आधारित सामाजिक वैषम्य घोर हिंसा हैं। ऊँच-नीच का भाव सामाजिक हिंसा है और मताग्रह साम्प्रदायिक हिंसा है। कुविचार, निन्दा, मिथ्याभाषण, संग्रह-वृत्ति, चोरी, काम-वासना, आत्म-प्रवंचना, छुआ-छूत की भावना, धोखा देना और परश्रम-जीवन सभी हिंसा के रूप हैं। आवश्यकता से अधिक धन संग्रह से समाज में भूखमरी फैलती है। धन या विचार की चोरी से दूसरों को पीड़ा होती है। रसनेन्द्रियों पर नियंत्रण नहीं रखने से अपनी और अन्य जीवों की हिंसा होती है।

अहिंसा मानव बल है और पशु बल की तुलना में कई गुना बड़ा है। अहिंसा वह आध्यात्मिक शक्ति है जो सैनिकों का साहस भी जीत लेती है। यह उनकी आत्मा पर विजय का आयुध है। अहिंसा में पराजय जैसी कोई भी चीज नहीं है, क्योंकि अहिंसा का ब्रह्मास्त्र घृणा न होकर प्रेम है। जो चीज हिंसा से प्राप्त होती है वह जीवन के लिए बोझ बन जाती है क्योंकि हिंसा, हिंसा को बढ़ाती है। प्रेम से जो प्राप्त होता है वही स्थिर है और सुखद भी। अहिंसा का आरंभ और अंत आत्मनिरीक्षण में होता है। अहिंसा के मूल में 'अद्वैतभाव' निहित है। यदि प्राणी मात्र में अभेद है तो एक के पाप का प्रभाव दूसरे पर पड़ता है। यदि कोई व्यक्ति किसी की हिंसा करता है तो वह प्रकारान्तर से अपनी ही हिंसा करता है, क्योंकि एक ही आत्मा सभी जीवों में समान रूप से विद्यमान है 'आत्मैवेदं सर्वं'। इस दृष्टि से अहिंसा सामाजिक धर्म है और इसी रूप में इसका विकास किया जाना चाहिए। कुछ लोगों का तर्क है कि समाज को अहिंसा के आधार पर नहीं चलाया जा सकता है। गाँधी इसका विरोध करते हुए कहते हैं कि "गलती करने पर पिता अपने पुत्र को थप्पड़ मार देता है, किंतु पुत्र अपने पिता से बदला लेने की बात तक नहीं सोचता, क्योंकि इस थप्पड़ के पीछे वह पिता का प्यार महसूस करता है।" जो बात परिवार के लिए सत्य है वही समाज के लिए भी सत्य है। आखिर समाज भी तो परिवार का ही विस्तृत रूप है। समाज में प्रचलित पारस्परिक व्यवहारों का नियम अहिंसा से ही संचालित हो सकता है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। अतः अहिंसा व्यक्तिगत जीवन का ही नियम न होकर समाज का भी नियम है इसीलिए सामाजिक व्यवस्था और विश्व शान्ति कायम रखने के लिए अहिंसा और प्रेम ही एकमात्र कारगर तरीके हैं। यही गाँधी का आह्वाहन है।

निष्कर्ष

सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया में अहिंसा और प्रेम का स्थान गांधीवादी दर्शन में केंद्रीय है। गांधी के लिए समाज का परिवर्तन बाहरी सत्ता-संरचनाओं के परिवर्तन से आरंभ नहीं होता; उसका वास्तविक आधार व्यक्ति की नैतिक चेतना, आत्मशुद्धि और सत्य के प्रति निष्ठा है। अहिंसा इस नैतिक चेतना को सामाजिक और राजनीतिक संघर्ष में रूपांतरित करती है, जबकि प्रेम उसे मानवीय, संवादपरक और रचनात्मक बनाता है।

गांधीवादी अहिंसा निष्क्रियता, कायरता या अन्याय के प्रति समर्पण नहीं है। यह अन्याय का निर्भीक प्रतिरोध है, जिसमें साधन और साध्य की एकता पर बल दिया जाता है। हिंसक साधनों से न्यायपूर्ण समाज की स्थापना नहीं की जा सकती, क्योंकि हिंसा संघर्ष के बाद भी घृणा, भय और प्रतिशोध को बनाए रखती है। सत्याग्रह अहिंसा का वह रूप है जो सत्य, आत्मबल, अनुशासन, आत्मपीड़ा और विरोधी के प्रति प्रेम पर आधारित है। इसका उद्देश्य विरोधी को नष्ट करना नहीं, बल्कि उसके

अंतःकरण को जागृत करना है। प्रेम गांधीवादी सामाजिक परिवर्तन का भावनात्मक आधार है। यह व्यक्ति को दूसरे की पीड़ा समझने, भिन्नता का सम्मान करने और संघर्ष में भी मानवीय गरिमा बनाए रखने की प्रेरणा देता है। प्रेम के बिना अहिंसा केवल निषेध बन सकती है; प्रेम उसे सक्रिय करुणा, सेवा और सामाजिक न्याय का रूप प्रदान करता है।

वर्तमान समय में जब हिंसा अनेक प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूपों में उपस्थित है, गांधीवादी अहिंसा और प्रेम नई प्रासंगिकता प्राप्त करते हैं। साम्प्रदायिक तनाव, डिजिटल घृणा, आर्थिक असमानता, पर्यावरणीय संकट और राजनीतिक ध्रुवीकरण के विरुद्ध गांधीवादी दृष्टिकोण संवाद, आत्मसंयम, सत्य, सह-अस्तित्व और न्यायपूर्ण प्रतिरोध का मार्ग दिखाता है। अतः सामाजिक परिवर्तन के लिए गांधीवादी संदेश को इस प्रकार संक्षेपित किया जा सकता है, अन्याय का विरोध करो, लेकिन अन्यायी से घृणा मत करो; सत्य पर दृढ़ रहो, लेकिन अपनी सीमाओं को स्वीकार करो; संघर्ष करो, लेकिन साधनों को नैतिक बनाए रखो; और सत्ता-परिवर्तन के साथ समाज-निर्माण का रचनात्मक कार्य भी करो। अहिंसा और प्रेम मिलकर सामाजिक परिवर्तन को केवल राजनीतिक विजय नहीं, बल्कि मानवीय मुक्ति और नैतिक पुनर्निर्माण की प्रक्रिया बना सकते हैं।

सन्दर्भ सूची

1. Bondurant, J. V. (1958). *Conquest of violence: The Gandhian philosophy of conflict*, Princeton University Press, Princeton, New Jersey, USA.
2. Gandhi, M. K. (1927). *An autobiography: The story of my experiments with truth*. Navajivan Publishing House, Ahmedabad.
3. Gandhi, M. K. (1938). *Hind Swaraj or Indian home rule*. Navajivan Publishing House, Ahmedabad.
4. Gandhi, M. K. (1945). *Constructive programme: Its meaning and place*. Navajivan Publishing House, Ahmedabad.
5. Gandhi, M. K. (1951). *Non-violence in peace and war*. Navajivan Publishing House, Ahmedabad.
6. Gandhi, M. K. (1968). *The collected works of Mahatma Gandhi*. Publications Division, Ministry of Information and Broadcasting, Government of India. New Delhi.
7. Klitgaard, R. E. (1971). Gandhi's non-violence as a tactic. *Journal of Peace Research*, 8(2), 143–153, <https://doi.org/10.1177/002234337100800203>, Accessed on 12/07/2026.
8. Misra, G. & Sharad, S. (2026). Self-refinement in the Hindu tradition. In J. Stevens-Long & E. K. Kallio (Eds.), *The international handbook of adult development and wisdom*, p. 290–332. Oxford University Press, Oxford, England.
9. Chapple, C. K. (2026, August 3). *Nonviolence (Ahimsa)*. Archive of Mystical Experiences, Center for the Study of World Religions, Harvard Divinity School. <https://cswr.hds.harvard.edu/news/2026/08/03/nonviolence-ahimsa>, Accessed on 10/07/2026.
10. Dwivedi, A. V. (2022). Satyagraha. *EBSCO Research Starters*. <https://www.ebsco.com/research-starters/history/satyagraha>, Accessed on 11/07/2026.
11. Dutta, M. (2026). The philosophical dimensions of truth and non-violence in M.K. Gandhi: A study. *Indian Journal of Modern Research and Reviews*, 4(6), 146–152. <https://doi.org/10.5281/zenodo.20731747>, Accessed on 12/07/2026.
12. Monika & Sharma, P. (2025). Reclaiming Gandhi's vision: Nonviolence and religious pluralism in contemporary India's communal divide. *Peace Review*, 37(4), 623–634.
13. मूर, विल्बर्ट ई. (1963). सोशल चेंज . एंगलवुड क्लिफ्स, प्रेंटिस-हॉल, न्यू जर्सी।
14. भावे, विनोबा. (1954). भूदान-यज्ञरू भूमि-दान अभियान, नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद।
15. गांधी, मोहनदास करमचंद. (1946). *हरिजन* (साप्ताहिक पत्रिका), खंड एक्स. नवजीवन प्रेस, अहमदाबाद।
16. दत्त, धीरेंद्र नाथ. (1952). इंडियन फिलॉसॉफिकल कांग्रेस की कार्यवाही, मैसूर, 1952, पृ. 8।
17. भावे, विनोबा. (1954). "भूदान यज्ञ", 2 जुलाई 1954.
18. पाण्डेय, दुर्गादत्त. (2005), "गांधी दर्शन के मूल बिंदु", पृ. 113।
19. बोस, नरेन्द्रनाथ के. (1935). महात्मा गांधी से एक साक्षात्कार. द मॉडर्न रिव्यू, खंड 58, अक्टूबर 1935, पृ. 410–413।
20. गांधी, मोहनदास करमचंद. (1938). *अहिंसा का मार्ग*. हरिजन, 3 दिसंबर 1938, पृ. 358 वॉल्यूम 6।
